❁ चौथा अध्याय ❁

।। सारांश।।

गीता जी के अध्याय 4 के श्लोक 1 से 3 में गीता ज्ञान दाता ने कहा कि मैंने इस अविनाशी योग को अर्थात् यह गीता वाला अध्यात्मिक ज्ञान को सूर्य देव से कहा था। सूर्य ने अपने पुत्र मनु से कहा तथा मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकु से कहा। इस प्रकार यह परम्परा कुछ समय तक चली वर्तमान में यह श्रेष्ठ ज्ञान बहुत समय से लगभग लुप्त हो गया था। तू मेरा प्रिय मित्र है। इसलिए मैंने वही ज्ञान तुझे कहा है। यह रहस्यमय अर्थात् गुप्त रखने योग्य है।

विचार करें : ज्ञान को गुप्त रखने योग्य क्यों कहा? क्योंकि यदि आम जीव को काल के जाल का पता लग जाए तो काल लोक खाली हो जाएगा।

विशेष :- यहाँ सूर्य शब्द इस आग के गोले के लिए नहीं है। एक देवता है जिसका नाम सूर्य है, जैसे पथ्वी पर भी किसी का नाम सूर्यकान्त, सूरज आदि होता है। अध्याय 4 के श्लोक 4 में अर्जुन ने पूछा कि आपका जन्म तो अब का है परंतु सूर्य देव का जन्म तो बहुत पहले का है। यह कैसे हो सकता है कि आपने ही यह ज्ञान कल्प की आदि में उत्पन्न सूर्य को दिया?

।। गीता ज्ञान बोलने वाला भी जन्मता-मरता है ।।

अध्याय 4 के श्लोक 5 से 9 तक गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अर्जुन तेरे तथा मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। इन सबको तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। मैं मनुष्य की तरह जन्म न लेने वाला अविनाशी आत्मा होते हुए तथा सर्व (इक्कीस ब्रह्मण्ड के) प्राणियों का स्वामी होते हुए भी अपनी प्रकति (अष्टांगी दुर्गा) को आधीन करके माया के गोविन्द श्री ब्रह्मा - श्री विष्णु - श्री शिव को उत्पन्न करता हूँ। उन्हीं में से अंश अवतार रूप में श्री कष्ण-श्री राम, श्री परसुराम आदि (संजामि) रचता हूँ तथा उनमें गुप्त रूप से प्रकट होता हूँ।

{श्री विष्णु पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के चतुर्थ अंश के अध्याय 2 श्लोक 21-26 में पष्ठ 168 पर प्रमाण है कि एक समय देवताओं तथा राक्षसों का युद्ध हुआ। देवता हार गए। पुनः साधना करने लगे तो काल ब्रह्म अपने पुत्र विष्णु जी के रूप में प्रकट होकर बोला कि जो तुम्हारा अभिष्ट है, वह मैंने जान लिया है। तुम लोग राजा पुरंजय को युद्ध के लिए तैयार करो। मैं उसके शरीर में प्रविष्ट होकर राक्षसों को मार डालूंगा। ऐसा ही किया।

❖ *श्री विष्णु पुराण के चतुर्थ अंश के अध्याय 3 श्लोक 4-6 में पष्ठ 173 पर एक अन्य प्रमाण भी है :- एक समय नागवंशियों के बहुमूल्य हीरे, खजाने आदि-आदि गंधर्वों ने लूट लिए तथा उनके राज्य पर भी कब्जा कर लिया। नागाओं की विनती स्वीकार करके काल ब्रह्म अपने पुत्र श्री विष्णु जी के रूप में प्रकट होकर बोला कि आप मानधाता राजा के पुत्र पुरूकुत्स को युद्ध के लिए तैयार करो। मैं उस पवित्र राजा के शरीर में कुछ समय के लिए प्रविष्ट होकर दुष्ट गंधर्वों को नष्ट कर दूँगा। ऐसा ही हुआ। इसी प्रकार श्री कष्ण जी के शरीर में प्रकट होकर गीता का ज्ञान काल ब्रह्म ने बोला।}*

गीता अध्याय 4 श्लोक 7 :- गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जब-2 धर्म की हानि तथा अधर्म की वद्धि होती है, तब-2 मैं अपने अंश अवतार (संजामि) रचता हूँ और वह अवतार साधुओं की रक्षा

तथा असाधुओं का संहार करने के लिए प्रकट हुआ करते हैं। पवित्र गीता बोलने वाला काल ब्रह्म कह रहा है कि अर्जुन मेरी भी जन्म-मत्यु होती है। इसे तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। यही प्रमाण गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में है जिस में कहा है कि मेरी उत्पत्ति को मेरे से उत्पन्न ऋषि देवता आदि नहीं जानते। अध्याय 4 श्लोक 9 में स्पष्ट किया है कि मेरे जन्म अलौकिक हैं। यह ब्रह्म (काल) एक ब्रह्मलोक रचकर उसमें तीन रूपों (महाब्रह्मा, महाविष्णु, महाशिव) में रहता है। इसकी जन्म-मत्यु होती है। यह महाशिव रूप में तब मरता है जब इसी का पुत्र त्रिलोकीय शिव 70000 (सत्तर हजार) बार मत्यु को प्राप्त हो जाता है। इसलिए अपने जन्म व मत्यु को अलौकिक कहा है। अधिक जानकारी के लिए कप्या पढ़ें प्रलय की जानकारी (इसी पुस्तक के पष्ठ नं 163 से 168 पर।)

हे अर्जुन! मेरे जन्म व कर्म अद्भभुत हैं जो कोई इस प्रकार तत्व से नहीं जान लेता है वह शरीर त्याग कर मेरे जाल में फंसा रह जाता है। (उसको कुछ समय स्वर्ग-महास्वर्ग में रख कर फिर जन्म-मरण के चक्र में डाल देता है।) जो मुझ काल को तत्व से जान लेता है उस पूर्णज्ञानी का पुर्नजन्म नहीं होता।

विशेष : - गीता जी के अध्याय 2 के श्लोक 12 में तथा इसी अध्याय 4 के श्लोक 5 तथा 9 में प्रत्यक्ष प्रमाण है कि गीता ज्ञान दाता तथा इसके पुजारी का जन्म-मरण बना रहेगा, फिर अध्याय 9 के श्लोक 7 में कहा है कि कल्प के अंत में सर्व प्राणी तथा स्वर्ग-नरक व पथ्वी लोक तक नष्ट हो जाते हैं। फिर कल्प के प्रारम्भ में मैं रचूंगा अर्थात् अस्थाई जन्म-मरण समाप्त हुआ, स्थाई नहीं। काल ब्रह्म अच्छी आत्माओं को रचता है अर्थात् पैदा करता है। फिर उनमें स्वयं प्रवेश करके गुप्त रूप से अपना उल्लू सीधा कर लेता है तथा अपने आपको आकार में प्रकट नहीं करता। इसका अटल अविनाशी नियम है कि वह अपने वास्तविक रूप में कभी प्रकट नहीं होता। (प्रमाण गीता जी के अध्याय 7 के श्लोक 24, 25 में।)

तीन लोक के सर्व प्राणी इस (काल) के अधीन हैं। यह इनका मालिक है। इसलिए कह रहा है कि मैं धर्म की हानि होने पर पाप कर्मी प्राणियों को मारने के लिए [राजा पुरंजय में प्रवेश करके काल ब्रह्म ने राक्षसों को मार डाला जो देवताओं को सताया करते। राजा पुरूकुत्स के शरीर में प्रविष्ट होकर गंधर्वों को मार डाला जो नागवंशियों को सताया करते थे। परशुराम जी के शरीर में प्रवेश करके क्षत्रियों का सफाया कर दिया। फिर दुर्वासा जी में प्रवेश करके शॉप के द्वारा 56 करोड़ यादवों समेत भगवान कष्ण व कष्ण जी के परिवार समेत नष्ट कर दिया यानि खा गया। कपिल मुनि में प्रवेश करके साठ हजार राजा सगड़ के पुत्रों का सफाया कर दिया। इसी प्रकार राजा मानधाता की बहत्तर क्षौहिणी सेना को चुणक ऋषि में प्रवेश करके दुःखदाई तत्वों को नष्ट किया तथा धर्म की रक्षा की तथा श्री कष्ण में प्रवेश करके महाभारत जैसा भयंकर युद्ध करवा दिया तथा स्वयं गुप्त रहा।] अपने अंश प्रकट करता हूँ। मेरे जन्म व कर्म अद्भभुत हैं। जो व्यक्ति मुझे इस प्रकार जान लेता है, वह ब्रह्मा, विष्णु, महेश (तीनों गुणों) को छोड़कर मेरा ही स्मरण करता है और मेरे को ही प्राप्त होता है अर्थात् मेरा ही आहार होता है। (काल अपने भक्त को महास्वर्ग यानि ब्रह्मलोक में भेजकर कुछ लम्बे समय तक जन्म मरण से बचा देता है। फिर चौरासी लाख प्रकार की जूनियों में डाल देता है तथा जो इसके मायाजाल को तत्व से जान लेता है उसका पुनर् जन्म नहीं होता है क्योंकि वे भक्त पूर्ण सन्त अर्थात् तत्वदर्शी सन्त की शरण में जा कर पूर्ण परमात्मा की भक्ति करके पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।)

।। पूर्ण ज्ञानी काल जाल में नहीं रहते।।

अध्याय 4 के श्लोक 10 से 15 में काल ब्रह्म ने कहा है कि जिनके राग द्वेष मर गए हैं जिसने मुझे यहाँ 21 ब्रह्मण्ड के कर्मों का कर्त्ता तथा मालिक हूँ, ऐसे तत्व से जान लिया है। वह मतावलम्बी हो चुके हैं। [नोट : वे तीनों मंत्रों के उपासक कबीर हंस हैं जो सत्यनाम व सारनाम सुमरण करके काल के यथार्थ स्वरूप को देख कर उसके सिर पर पैर रख कर पार (सतलोक में चले जाते हैं) हो जाते हैं।] जैसे गीता अध्याय 7 श्लोक 17 में कहा है कि ज्ञानी मुझे अच्छे लगते हैं तथा मैं ज्ञानी को प्रिय हूँ। क्योंकि वे तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की उपासना न करके मेरी अर्थात् ब्रह्म की भक्ति करते हैं, इसी प्रकार यहाँ गीता अध्याय 4 श्लोक 11 में कहा है कि जो मुझे भजते हैं मैं उन्हें भजता हूँ अर्थात् मुझे अच्छे लगते हैं यही प्रमाण गीता अध्याय 16 व 17 में विस्तृत है। फिर कहा है कि जो मुझे अच्छी तरह जान लेता है वह फिर मेरे जाल में नहीं फँसता है तथा जो देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) की साधना करते हैं वे जल्दी प्रकट हो कर उन्हें कुछ राहत दे देते हैं परंतु पूर्ण मुक्त नहीं कर सकते। इसलिए तू अपने पूर्वजों की तरह शास्त्रानुकूल भक्ति कर्म कर।

।। कर्मों के बन्धन से त्रिलोकी नाथ भी नहीं बचे।।

अध्याय 4 के श्लोक 16 से 22 में कर्मों का विवरण कहा है कि जो व्यक्ति जिस किसी कर्म को करे, उसमें कर्त्तापन का अभिमान नहीं लाए तथा कहे कि कर्म मालिक आपके आश्रित होकर कर रहा हूँ। कर्म-अकर्म का ज्ञान इस तुच्छ जीव को नहीं है। जो निष्काम भावना से कर्म करता है वह पंडित (विद्वान) है तथा कर्मों के बन्धन में नहीं बन्धता। इसीलिए इसी अध्याय के श्लोक 34 में कहा है कि तत्वज्ञान से ही सर्व कर्मों का ज्ञान होगा कि कौन प्रभु पूजा के योग्य है, कौन नहीं? फिर साधक ब्रह्म द्वारा लगाए कर्मों के बन्धन में न बन्ध कर सत्यलोक में चला जाता है। वह सदा के लिए कर्म बन्धन से मुक्त हो जाता है।

काल ब्रह्म तक के ज्ञान से तो कर्म बन्धन से मुक्ति नहीं मिलती। वे तो भोगने ही पड़ते हैं। विचार करें भगवान विष्णु से बढ़ कर कौन विद्वान हो सकता है? उनका भी कर्म बन्धन में बंध कर श्री रामचन्द्र रूप में जन्म हुआ। क्योंकि श्री विष्णु जी ने महर्षि नारद जी को बन्दर का मुख लगाया जिस कर्म के अनुसार नारद जी ने भगवान विष्णु जी को शाप दिया। जिसके बन्धन के अनुसार राजा दशरथ के घर जन्म लिया फिर वनवास हुआ तथा बाली का वध किया। बाली वध के कर्म बन्धन में बंध कर श्री कष्ण के रूप में वही विष्णु आत्मा का द्वापर युग में जन्म हुआ। फिर बाली की आत्मा जो उस समय एक शिकारी बना था ने उस कर्म का बदला श्री कष्ण जी के पैर में तीर मार कर लिया। उसी कर्म बन्धन में बंध कर कष्ण रूप में जन्मना पड़ा।

कर्म बन्धन से केवल परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ ही छुड़वा सकते हैं। इसलिए उन्हें बन्दी छोड़ कहा जाता है। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 में तथा यजुर्वेद अध्याय 8 मंत्र 13 में भी प्रमाण है (कविरंघारिरसि) कबीर परमेश्वर पाप का शत्रु है अर्थात् पाप विनाशक है (बम्भारिरसि) वह कबीर परमेश्वर बन्धनों का शत्रु है अर्थात् काल के कर्म बन्धन रूपी कारागार से छुड़वाने वाला बन्दी छोड़ है। ''अमर करूं सतलोक पठाऊँ। तातें बन्दी छोड़ कहाऊँ।।''

अध्याय 4 के श्लोक 23-24 का भाव है कि जो साधक सर्व कर्म परमात्मा को साक्षी रख कर कर रहा है उसके सर्व कर्म ब्रह्म (परमात्मा) जैसे होते हैं। चूंकि वह तत्व ज्ञानी साधक शास्त्र विधि

रहित मनमाना आचरण नहीं करता। इसलिए उसके वचन कर्म परमात्मा के गुणगान करने में तथा सर्व समय प्रभु चिन्तन में ही लीन रहता है। पूर्ण विचार कर कार्य करता है।

।। जो जैसी साधना करता है, उसे ही गलती से पापनाशक जानता है ।।

अध्याय 4 के श्लोक 25 से 30 तक में कहा है कि इनमें भिन्न-2 प्रकार की कर्म उपासना का विवरण किया है। कहा है कि कुछ साधक तो हवन यज्ञ करके कर्मयोग को कर रहे हैं, कुछ एक स्थान पर विशेष आसन पर बैठ कर कान,नाक,आँख आदि इन्द्रियों को हठ करके रोक कर संयम करने की साधना में लगे हैं। अन्य भक्तजन देवी-देवताओं की भक्ति करते हैं। कुछ दान, कुछ घोर तप करते हैं। कुछ व्रत कर रहे हैं, कुछ अन्य अभ्यास तथा स्वाध्याय (धार्मिक शास्त्र पढ़ना) कर्म श्रेष्ठ मान कर आध्यात्मिक कर्मों में संलग्न हैं तथा अन्य प्राणायाम कर रहे हैं और मान रहे हैं कि ये सर्व भक्ति कर्म पाप नष्ट करने वाले हैं।

विचार करें :- भगवान कृष्ण अर्जुन के गुरु रूप में थे। (जैसा कि गीता जी के अध्याय 2 के श्लोक 7 में स्वयं अर्जुन कह रहा है कि मैं आपकी शरण हूँ तथा आपका शिष्य हूँ।) जब युधिष्ठिर को भयानक स्वपन आने लगे तब श्री कृष्ण (गुरु) जी से कारण व समाधान पूछा था। भगवान ने कहा था कि आपको युद्ध में किए पाप दुःखदाई हो रहे हैं। इसका समाधान यज्ञ ही बताया था। यज्ञ की गई। फिर भगवान कृष्ण के पैर में बालिया नामक शिकारी जो बाली की आत्मा थी, ने तीर मारा। उस समय श्री कृष्ण जी ने अर्जुन व सर्व पाण्डवों को कहा कि आप हिमालय में जा कर आसक्ति रहित हो कर मोह ममता त्याग कर तप साधना इन्द्रियों पर काबू पाकर संयम रखते हुए करना। आपके (पाण्डवों के) सर्व पाप समाप्त हो जाएंगे। पाण्डवों ने ऐसा ही किया परंतु फिर भी नरक में गिरे। महाभारत ग्रन्थ में प्रमाण है। इससे सिद्ध है कि वेदों व गीता जी में वर्णित साधना से पाप विनाश नहीं होते, भोगने ही पड़ते हैं। अन्य उपलब्धियाँ जैसे सिद्धियाँ व स्वर्ग-महास्वर्ग की प्राप्ति हो जाती है। परंतु पाप कर्म नहीं कटते क्योंकि वेदों तथा गीता का ज्ञान अधूरा है।

संत गरीबदास जी ने परमेश्वर कबीर जी से प्राप्त तत्वज्ञान में बताया है कि :-

गरीब, ऋग यजु साम अथर्वण, चारों वेद चितभंगी रे। सूक्ष्म बेद साहेब का बांचै, सो हंसा सत्संगी रे।।

भावार्थ :- वेदों में लिखा है कि नेति यानि ''न इति'' अर्थात् जो ज्ञान चारों वेदों में है, यह सम्पूर्ण नहीं है। इस अध्यात्म ज्ञान का वेदों में अंत नहीं (न इति) है। इसीलिए वाणी में कहा है कि ऋग्वेद-यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद का ज्ञान अधूरा होने से चितभंगी है यानि बुद्धि में भ्रम उत्पन्न करने वाला है। सम्पूर्ण आध्यात्मिक ज्ञान स्वयं परमेश्वर जी ने बताया है, वह यथार्थ है। जो पुण्यात्मा उस सूक्ष्मवेद को पढ़ता है, उसके पास सत्य ज्ञान है, वह सत्संगी है। सूक्ष्मवेद को तत्वज्ञान भी कहा जाता है जिसका वर्णन इसी अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में है। जैसे श्रीमद्भगवत गीता में चारों वेदों का संक्षिप्त ज्ञान है। इसी में बहुत भ्रमित ज्ञान है। जिस कारण से पाठक तथा अनुवादक समझ नहीं पाए कि गीता अध्याय 4 श्लोक 5, अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता अपने को नाशवान बता रहा है। जन्म-मरण सदा बना रहेगा। जबकि हिन्दू धर्म के अनुयाई व धर्मगुरू व प्रचारक गीता ज्ञान दाता श्री कृष्ण जी को मानते हैं। श्री कृष्ण जी को स्वयं विष्णु मानते हैं। श्री विष्णु उर्फ श्री कृष्ण को अविनाशी प्रभु तथा सबसे बड़ा प्रभु मानते हैं। कहते हैं कि श्री कृष्ण जी से यानि श्री विष्णु के ऊपर कोई स्वामी ही नहीं है। ये अखिल ब्रह्माण्ड के स्वामी हैं। इस प्रकार पाठक को चित भंग हो जाता है यानि भ्रम उत्पन्न हो जाता है कि

ऊपर बताए अध्यायों के श्लोकों में तो श्री कष्ण जी अपने को नाशवान बता रहे हैं। हमने अविनाशी सुना है। गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 तथा 20-23 में त्रिगुण माया यानि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव आदि-आदि देवताओं की पूजा करने वाले राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहे हैं। अध्याय 7 के ही श्लोक 16-18 में गीता ज्ञान दाता अपनी भक्ति करने को कहता है, परंतु श्लोक 18 में ही अपनी भक्ति से होने वाली गति यानि मुक्ति को अनुत्तम कहा है।

गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में तथा अध्याय 8 श्लोक 3, 8-10, 20-22 में तथा गीता के ही अध्याय 18 श्लोक 46, 61-62, 66 में तथा अन्य अनेकों श्लोकों में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमात्मा वास्तव में अविनाशी सब जीवों व ब्रह्माण्डों की उत्पत्तिकर्ता सबका धारण-पोषण करने वाला (उत्तमः पुरूषः तू अन्यः) उत्तम परमेश्वर तो अन्य ही बताया है। उसकी शरण में जाने के लिए गीता ज्ञान बोलने वाले ने कहा है। उस परमेश्वर की कपा से ही सनातन परम धाम प्राप्ति तथा परम शांति प्राप्ति बताई है। वह परमेश्वर कौन है, यह गीता तथा वेदों में स्पष्ट नहीं है। उसकी जानकारी के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में कहा है कि वह परम अक्षर ब्रह्म अपने मुख कमल से वाणी बोलकर तत्वज्ञान बताता है। उसमें यज्ञों यानि धार्मिक अनुष्ठानों का विस्तार ज्ञान उस तत्वज्ञान में बताता है। उसको जानने के पश्चात् साधक पापों से मुक्त हो जाता है। पापों से मुक्त होना पूर्ण मोक्ष होना है। उस तत्वज्ञान को तू तत्वदर्शी संतों से समझ। तत्वज्ञान न वेदों में है, न गीता में है, वह सूक्ष्मवेद में है जो मेरे (रामपाल दास के) अतिरिक्त वर्तमान में विश्व में किसी के पास नहीं है। इसी कारण से गीता के सब अनुवादक तथा पाठक व प्रचारक भ्रमित हैं। श्री कष्ण जी अर्थात् श्री विष्णु जी को गीता ज्ञान बोलने वाला कहते हैं। इसी को सबसे बड़ा प्रभु कहते हैं जबकि गीता बोलने वाला अपने से श्रेष्ठ प्रभु (उत्तम पुरूष = पुरूषोत्तम) किसी अन्य को कह रहा है। सूक्ष्मवेद में सतनाम तथा सारनाम का वर्णन है।

कहा है कि सतनाम व सारनाम का सुमरण करने वाला उपासक सनातन ब्रह्म (सतपुरुष) को प्राप्त हो जाता है। जिसका जन्म-मरण स्थाई रूप से समाप्त हो जाता है। पूर्ण परमात्मा का साधक अन्य चार यज्ञों के साथ-2 ज्ञान यज्ञ अधिक करता है, ज्ञान यज्ञ सुबह, शाम, दोपहर का स्वाध्याय तथा सतसंग श्रवण व धार्मिक पुस्तकों का पठन तथा साथ-2 गुरु मन्त्र का जाप भी श्वांस-2 में करता है। उस साधक के पाप विनाश हो जाते हैं तथा अनादि मोक्ष प्राप्त करता है। सम्पूर्ण आध्यात्मिक ज्ञान ''ब्रह्मणः'' सच्चिदानंद घन ब्रह्म यानि पूर्ण परमात्मा स्वयं पथ्वी पर प्रकट होकर अपने (मुखे) मुख से बोली वाणी में बताता है जिसका प्रमाण इसी अध्याय 4 के श्लोक 32 में है। आप जी अगले श्लोकों में पढ़ेंगे व जानेंगे तथा सत्य मानेंगे।

।। नाम के साथ-साथ यज्ञ भी आवश्यक।।

अध्याय 4 के श्लोक 31-32 में कहा है कि गीता अध्याय 4 श्लोक 25-30 तक वर्णित शास्त्रविरूद्ध साधना से बचे हुए साधक शास्त्रविधि अनुसार अर्थात् नाम साधना करते हैं। वे यज्ञ से अलग सतनाम व सारनाम के जाप रूपी आनन्द (अमत) का अनुभव करने वाले (सनातन ब्रह्म) पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होते हैं। यज्ञ भी आवश्यक बताते हुए कहा है कि नाम साधना के साथ पाँचों यज्ञ (धर्म, ध्यान, हवन, प्रणाम, ज्ञान अर्थात् धार्मिक शास्त्रों का पठन पाठन) भी आवश्यक हैं। जैसे सतनाम व सारनाम रूपी बीज बीजकर उसमें यज्ञ रूपी खाद पानी भी अति आवश्यक है। जिससे भक्ति रूपी पौधा परिपक्व होता है। यदि केवल नाम साधना करते रहे यज्ञ नहीं किए तो जैसे पानी

और खाद के अभाव से पौधा सूख जाता है, इसी प्रकार यज्ञ न करने से साधक अहंकारी, दयाहीन, श्रद्धाहीन, हो जाता है। वास्तविक जाप मंत्र बिना केवल यज्ञ करना भी निष्फल है। यदि गुरु जी से नाम नहीं ले रखा है वैसे यज्ञ करता रहे वह भी निष्फल है पूर्ण सन्त से वास्तविक मन्त्र (सत्यनाम व सारनाम) का उपदेश लेकर नाम जाप तथा पाँचों यज्ञ नहीं करते तो उनको इस लोक में ही कोई लाभ नहीं होगा फिर परलोक में कैसे हो सकता है? भावार्थ है कि पूर्ण सन्त द्वारा दिया पूर्ण भक्ति मार्ग ही लाभदायक है। अर्जुन यज्ञ में प्रतिष्ठित पूर्ण परमात्मा को इष्ट रूप में मान कर यज्ञ करता है तथा यज्ञों के साथ-साथ वास्तविक नाम का सुमरण करके पूर्ण मोक्ष रूपी अमत को प्राप्त हो जाता है अर्थात् पूर्ण परमात्मा को प्राप्त हो जाते हैं।

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा द्वारा अपने मुख कमल से सूक्ष्म वेद में सभी यज्ञों यानि धार्मिक अनुष्ठानों का विस्तार पूर्वक विवरण है जो संसारिक कर्तव्य कर्मों तथा शारीरिक यानि शरीर द्वारा दान, सेवा, स्मरण आदि भक्ति कर्मों से सम्पन्न होते हैं। इस प्रकार जान कर साधक मुक्त हो जाता है। उस तत्वज्ञान को मैं (गीता बोलने वाला प्रभु) भी नहीं जानता। जो पूर्ण परमात्मा के पूर्ण मोक्ष मार्ग का विवरण है, उसके लिए अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि उस तत्वज्ञान को जानने वाले संतों की खोज कर।

[*नोट :- गीता जी के अन्य अनुवाद कर्ताओं ने गीता अध्याय 4 श्लोक 32 का अनुवाद ठीक नहीं किया है क्योंकि उन्होंने ब्रह्मणः का अर्थ वेद किया है। जबकि गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ब्रह्मणः का अर्थ उन्होंने ही सच्चिदानन्दघन ब्रह्म किया है जो सही है। इसलिए मानव समाज गीता जी के अनमोल ज्ञान के यथार्थ भाव को नहीं समझ सका।* **]**

गीता अध्याय 4 श्लोक 25 से 30 तक में कहा है कि कुछ साधक देवताओं की पूजा रूपी यज्ञ अर्थात् धार्मिक कर्म करते हैं दूसरे हठयोग द्वारा कर्म इन्द्रियों को साधते हैं दूसरे श्वांस क्रिया करते हैं अन्य घोर तप तथा अहिंसा आदि घोर व्रत करते हैं अन्य दान ही करते हैं दूसरे योगी जन केवल अल्पाहार ही करते हैं। ये सर्व साधक अपनी-2 साधनाओं को पाप नाशक जानते हैं। श्लोक 32 में कहा है कि उपरोक्त साधनाओं सहित पूर्ण मोक्ष मार्ग का ज्ञान सच्चिदानन्दघन ब्रह्म अर्थात् पूर्ण परमात्मा के द्वारा अपने मुख कमल से कहे ज्ञान अर्थात् सच्चिदानन्दघन की वाणी में (सूक्ष्म वेद यानि कविर्वाणीमें) विस्तार से कहा गया है वह तत्वज्ञान है। गीता अध्याय 4 के ही श्लोक 34 में कहा है कि उस ज्ञान को (जो सच्चिदानन्दघन ब्रह्म की वाणी में कहा है उस तत्वज्ञान को) तत्वदर्शी सन्तों से समझ तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में बताई है।

।। तत्वदर्शी संतों से ज्ञान समझकर भक्ति करने से पूर्ण मुक्ति संभव।।

विशेष : अध्याय 4 के श्लोक 33,34 तथा 35 का भाव है कि गीता ज्ञान दाता ने अर्जुन से कहा हे अर्जुन! इस प्रकार पूर्ण परमात्मा के ज्ञान को व समाधान को जानने वाले तत्वदर्शी संतों के पास जा। उनको आधीनी पूर्वक आदर के साथ दण्डवत् प्रणाम कर प्रेम व विनय पूर्वक उस परमात्मा का मार्ग पूछ। फिर वे संत पूर्ण परमात्मा को पाने की विधि (सतनाम व सारनाम अर्थात् ॐ, तत्,सत् का मन्त्र) बताएगें जिसको जान कर तू फिर इस प्रकार अज्ञान रूपी मोह को प्राप्त नहीं होगा। फिर तू इसी ज्ञान के आधार पर पहले अपने आपको जानेगा कि मैं काल के जाल में कैसे फंसा तथा फिर मुझे (काल रूप से) देखेगा, तब तू यहाँ से निकलने की पूरी चेष्टा करेगा। तत्वदर्शी संत की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तक में देखें। अध्याय 4 के श्लोक 33 में

पवित्र श्री मद्भगवत गीता जी को बोलने वाले काल प्रभु ने कहा कि द्रव्यमय यज्ञ {यानि धन से होने वाले धार्मिक अनुष्ठान जो बिना तत्वज्ञान समझे करते हैं जैसे दान देना, धर्म-भण्डारा (लंगर-भोजन करना), वस्त्र दान करना, कूँए, धर्मशाला, प्याऊ आदि-आदि धर्मार्थ बनवाना} से ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है अर्थात् पहले पूर्ण संत से आध्यात्मिक सम्पूर्ण ज्ञान समझ। फिर उनके द्वारा बताए अनुसार धर्म यज्ञ कर।

उदाहरण :- एक सज्जन पुरूष ने भावुक होकर एक भिखारी को पाँच सौ रूपये दान दे दिए। भिखारी पहले पाव शराब सेवन करता था। उस दिन आधी बोतल पी गया। शेष रूपये भी कहीं गिर गए। प्रतिदिन की तरह पत्नी ने शराब सेवन का विरोध किया तो भिखारी ने पत्नी की पिटाई कर दी। पत्नी ने दोनों बच्चों समेत आत्महत्या कर ली। उस सज्जन को दान से पुण्य के स्थान पर पाप मिला। इसलिए धर्म यज्ञ करने से पहले तत्वज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ बताई है। गीता ज्ञान देने वाला भी उस तत्वज्ञान को नहीं जानता क्योंकि श्लोक 34 में कहा है कि मैं उस पूर्ण परमात्मा के तत्वज्ञान से अनभिज्ञ हूँ अर्थात् मैं नहीं जानता। इसलिए किसी पूर्ण परमात्मा के ज्ञान को जानने वाले ज्ञानी संतों (धीराणाम्) के पास जाकर पूर्ण जानकारी (पूर्णब्रह्म परमात्मा का मार्ग) प्राप्त कर, पहले उन पूर्ण संतों को दण्डवत् प्रणाम करना, फिर उनकी सेवा करना तथा अति आधीनी से विनम्र भाव से पूर्ण परमात्मा को पाने की विधि पूछना। तब वे प्रसन्न हो कर तुझे पूर्ण तत्व ज्ञान समझाएगें तथा नाम उपदेश दे कर कल्याण करेंगे। फिर मुझे समझ पाएगा कि मैं वास्तव में काल हूँ। पहले तो तू अपने आपको समझेगा कि तू कौन है तथा कैसे मेरे (काल के) जाल में फंसा? फिर मुझे (काल समझ कर) विशेष दष्टिकोण से देखेगा (पहले वाले भाव से नहीं)। जब तुझे पूर्ण परमात्मा का ज्ञान हो जाएगा। (फिर पूरा गुरु तलाश करेगा जो तुझे सत्यनाम व सारनाम देगा)। फिर तू उस तत्वदर्शी संत से तीन मंत्र का जाप (जिनमें एक ओ३म् + तत् + सत् दो सांकेतिक हैं जो वहीं पूर्ण संत बता सकता है) लेकर सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो जाएगा। जब तुझे मेरा (काल का) पूर्ण ज्ञान हो जाएगा तो पूरी तड़फ करके नाम लेकर भजन करके अग्नि की तरह वह सत्यनाम व सारनाम की लगन पाप को नष्ट करेगी अर्थात् उस परमात्मा में यह शक्ति है कि वह जीव के सर्व पापों को समाप्त कर सकता है जबकि ब्रह्म (काल) ऐसा नहीं कर सकता। जिसको पूर्ण जानकारी हो गई वह परम शांति को प्राप्त हो जाएगा अर्थात् पूर्ण परमात्मा की साधना करके पूर्ण मुक्त हो जाएगा।

जिस भक्त आत्मा का पूर्ण संशय मिट गया उसने अपने आपको पूर्ण परमात्मा को समर्पित कर दिया। वह ज्ञानी व्यक्ति संशय रूपी राक्षस को तत्वज्ञान रूपी तलवार से काट देता है। इसलिए उठ अर्थात् सचेत होकर तत्वदर्शी संत से तत्वज्ञान सुन कर शास्त्र अनुकूल भक्ति कर्मों पर अडिग हो जा। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 में भी है जिसमें तत्वदर्शी सन्त की पहचान बताई है तथा कहा है कि तत्वज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा अज्ञान को काटकर उस के पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आता अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 36-42 का सारांश :-

❖ *अध्याय 4 श्लोक 36 :- उपरोक्त ज्ञान तथा साधना के करने से साधक (पापेभ्यः) पापियों से (अपी) भी (पापकृतमः) अधिक पाप करने वाला है तो भी तत्वज्ञान रूपी नौका द्वारा पाप के समुद्र से भली-भांति तर जाएगा क्योंकि तत्वदर्शी संत उपरोक्त नाम जाप देते हैं जो सर्व पापों को नष्ट कर देते हैं। पापरहित पवित्र होकर जीव परमात्मा के पास चला जाता है।*

❖ *अध्याय 4 श्लोक 37 :- इस श्लोक में कहा है कि तत्वज्ञान को जानकर तत्वदर्शी संत से नाम दीक्षा लेकर साधना करने से साधक के पाप कर्म ऐसे भस्म हो जाते हैं जैसे अग्नि ईंधन को जलाकर भस्म बना देती है। भावार्थ है कि तत्वज्ञान बताने वाला संत साधना भी बताएगा जिससे पाप नष्ट हो जाऐंगे। साधक भविष्य में कोई पाप कर्म नहीं करता।*

सूक्ष्मवेद में भी कबीर जी ने कहा है कि :-

कबीर, जब ही सतनाम हृदय धरो, भयो पाप का नाश। जैसे चिंनगी अग्नि की, पड़ै पुराने घास।।

भावार्थ :- पूर्ण गुरू से दीक्षा लेकर सच्चे मन से मर्यादा में रहकर सतनाम का जाप करने से पाप ऐसे नष्ट हो जाते हैं जैसे पुराने सूखे घास में आग की चिंगारी गिर जाए तो घास जलकर भस्म बन जाता है।

❖ *अध्याय 4 श्लोक 38 :- इसलिए इस संसार में तत्वज्ञान के समान कोई पवित्र करने वाला नहीं है जो सम्पर्क में आने वाले को शुद्ध कर देता है। उस ज्ञान के आधार से तत्वदर्शी संतों के सम्पर्क में आकर शुद्ध अन्तःकरण हुआ भक्त स्वयं ही अपना अनुभव (विन्दति) बताता है।*

❖ *अध्याय 4 श्लोक 39 :- तत्वज्ञानी इन्द्रियों पर संयम करके (तत्) उससे (परः) आगे का (ज्ञानम्) सूक्ष्मवेद वाला सम्पूर्ण ज्ञान (लभते) प्राप्त करता है। उस तत्वज्ञान को तत्वज्ञानी से प्राप्त करके साधक शीघ्र ही (पराम्) ब्रह्म साधना से होने वाली गति से दूसरी गति से होने वाली परम शांति को प्राप्त हो जाता है।*

❖ *अध्याय 4 श्लोक 40 :- विवेकहीन यानि जिसको तत्वज्ञान नहीं मिला, उसका संशय समाप्त नहीं होता है। वह सत्य मार्ग से अवश्य भटककर नष्ट हो जाता है। संशययुक्त व्यक्ति के लिए न यह लोक सुखदायक, न परलोक ही सुखदायक है।*

❖ *अध्याय 4 श्लोक 41 :- हे धनंजय! जिसने तत्वज्ञान सुनकर विवेक द्वारा संशय का नाश कर लिया है जिसने सर्व भक्ति कर्म परमात्मा पर छोड़ दिए हैं। वह पुनः पापकर्म नहीं करता। जिस कारण से वह कर्मों के बन्धन में नहीं बँधता।*

❖ *अध्याय 4 श्लोक 42 :- इस प्रकार विचार करके हे भारत! अपने हृदय में उत्पन्न अपने संशय को ज्ञान रूपी तलवार से काटकर (योगम् आतिष्ठ) भक्ति कर्म में स्थित होकर (उतिष्ठ) साधना के लिए खड़ा हो जा यानि भक्ति के लिए कमर कस ले।*

विवेचन :- गीता अध्याय 4 के श्लोक 42 के अनुवाद में मेरे (लेखक-अनुवादक) के अतिरिक्त सर्व अनुवादकों ने अपने अनुवाद में लिखा है कि युद्ध के लिए खड़ा हो जा जो गलत है क्योंकि पूरे अध्याय 4 में परमात्मा के तत्वज्ञान तथा अज्ञान का विश्लेषण है। स्पष्ट किया है कि शास्त्रविरूद्ध अधूरे व मनमाने भक्ति कर्मों को तत्वज्ञान से समझकर उनको त्यागकर पूर्ण परमात्मा द्वारा अपने मुख कमल से बताये तत्वज्ञान को तत्वदर्शी संतों से समझकर कर्तव्य भक्ति कर्म कर। फिर विवेक रूपी तलवार से अज्ञान को काटकर तत्वज्ञान के आधार से (योगम्) साधना में (आतिष्ठ) स्थित हो जा। भक्ति के लिए (उतिष्ठ) खड़ा हो जा यानि सत्य साधना के लिए कमर कस ले। विचारणीय विषय तो यह है कि चर्चा अध्यात्म ज्ञान की चल रही है। योग का अर्थ भक्ति करना है। इस प्रकरण में युद्ध के लिए खड़ा होने को लिखना अनुवादकों की अल्पज्ञता का प्रमाण है। अगला अध्याय नं. 5 भी परमात्मा की भक्ति तथा शुभ-अशुभ तथा कर्तव्य-अकर्तव्य कर्मों का वर्णन करता है। गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा की जानकारी से भरा है।

❑❑❑